निर्वाण भक्तिः

विबुधपति-खगपति-नरपति-धनदोरग-भूत-यक्षपति-महितम्।
अतुल-सुखविमल-निरुपम-शिव-मचल-मनामयं हि संप्राप्तम्।।१।।

सुरपति खगपति नरपति धनपति, नाग यक्षपति से पूजित।
अचल निरामय अतुल विमल, निरुपम सुखमय शिवपद को प्राप्त।।१।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्याणैः संस्तोष्ये, पंचभि-रनघं त्रिलोक-परमगुरुम्।
भव्यजन-तुष्टिजननै - र्दुरवापैः सन्मतिं भक्त्या।।२।।

दोष रहित त्रैलोक्य परमगुरु, सन्मति जिन का भक्ती से।
स्तवन करूं भविजन तुष्टिप्रद, दुर्लभ पंचकल्याणक से।।२।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आषाढ़-सुसित षष्ठ्यां, हस्तोत्तरमध्यमाश्रिते शशिनि।
आयातः स्वर्गसुखं भुक्त्वा पुष्पोत्तराधीशः।।३।।

हस्त उत्तरा मध्य शशी था, सित अषाढ छठ तिथि उत्तम।
पुष्पोत्तर विमानपति दिव सुख, भोग वहां से तज सुरतनु।।३।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धार्थ-नृपति-तनयो, भारत-वास्ये विदेह-कुण्डपुरे।
देव्यां प्रियकारिण्यां, सुस्वप्नान्-संप्रदर्श्य विभुः।।४।।
भरत क्षेत्र में विदेह जनपद, कुंडलपुर सिद्धार्थ नृपति।
रानी प्रियकारिणी को स्वप्न, दिखा शुभ गर्भ में आये विभु।।४।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्र सितपक्ष-फाल्गुनि, शशांक-योगे दिने त्रयोदश्यां।
जज्ञे स्वोच्च-स्थेषु, ग्रहेषु सौम्येषु शुभलग्ने।।५।।
फाल्गुनि उडु[१] शशियोग चैत्र सित त्रयोदशी शुभ लग्न महा।
सौम्यग्रह सब उच्च स्थानों, में तब प्रभु ने जन्म लिया।।५।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हस्ताश्रिते शशांके, चैत्र-ज्योत्स्ने चतुर्दशी - दिवसे।
पूर्वाण्हे रत्नघटै - र्विबुधेन्द्राश्चक्रुरभिषेकम्।।६।।
हस्त नखत में शशि था चैत्र, सुदी चौदस पूर्वाण्ह समय।
इन्द्रों ने मिल रत्न घटों से, प्रभु अभिषेक किया गिरि पर।।६।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

भुक्त्वा कुमारकाले, त्रिंशद्-वर्षाण्यनंतगुणराशिः।
अमरोपनीतभोगान् - सहसाभिनिबोधितोऽन्येद्युः।।७।।
देवों द्वारा लाये भोजन, वसन वस्तु का तीस बरस।
कर उपभोग अनंत गुणाकर, सहज किसी दिन हुए प्रबुद्ध।।७।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

नानाविध-रूपचितां, विचित्र-कूटोच्छ्रितां मणिविभूषाम्।
चंद्रप्रभाख्य-शिविका-मारुह्य पुराद्-विनिष्क्रान्तः।।८।।

---
१. नक्षत्र।

चन्द्रप्रभा पालकि शुभ कूटों से ऊँची मणि से भूषित।
चित्र विचित्रित उस पर चढ़कर, पुर से बाह्य गये सन्मति।।८।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

मार्गशिर-कृष्णदशमी-हस्तोत्तर-मध्यमाश्रिते सोमे।
षष्ठेन त्वपराण्हे, भक्तेन जिनः प्रवव्राज।।९।।
मगसिर कृष्णा दशमी को शशि, हस्त उत्तरा मध्य हुआ।
बेला कर अपराह्ण काल में, प्रभु ने दीक्षा स्वयं लिया।।९।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्राम-पुर-खेट-कर्वट-मटंब-घोषाकरान् प्रविजहार।
उग्रैस्तपोविधानै - र्द्वादशवर्षाण्यमरपूज्यः।।१०।।
सुरपति पूज्य उग्र तप करते, बारह वर्ष विहार किया।
ग्राम नगर खेट कर्वट खनि, मटंब घोष में भ्रमण किया।।१०।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋजुकूलायास्तीरे, शालद्रुम-संश्रिते शिलापट्टे।
अपराण्हे षष्ठेना-स्थितस्य खलु जृंभिकाग्रामे।।११।।
ग्राम जृंभिका में ऋजुकूला, नदि तट शाल वृक्ष नीचे।
बेला करके शिलापट्ट पर, सांझ समय में प्रभु तिष्ठे।।११।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वैशाखसित-दशम्यां, हस्तोत्तर-मध्यमाश्रिते चंद्रे।
क्षपकश्रेण्यारूढस्योत्पन्नं केवलज्ञानम् ।।१२।।
हस्तोत्तर नक्षत्र मध्य शशि, थी वैशाख सुदी दशमी।
ध्यान क्षपक श्रेणी में चढ़कर, वीर हुए केवलज्ञानी।।१२।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ भगवान् संप्रापद्, दिव्यं वैभारपर्वतं रम्यम्।
चातुर्वर्ण्यसुसंघस्तत्राभूद् गौतम - प्रभृति।।१३।।
महावीर वैभार मनोहर, दिव्य सुपर्वत पर आये।
चतुर्वर्ण शुभ संघ सुगौतम, गणधर आदि सभी आये।।१३।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

छत्राशोकौ घोषं, सिंहासनदुंदुभी कुसुमवृष्टिम् ।
वरचामर-भामंडल-दिव्या-न्यन्यानि चावापत् ।।१४।।
तरु अशोक छत्रत्रय दिव्य-ध्वनि सिंहासन दुंदुभि हैं।
कुसुमवृष्टि चामर भामंडल, प्रातिहार्य ये दिव्य कहे।।१४।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशविध-मनगाराणा-मेकादशधोत्तरं तथा धर्मम् ।
देशयमानो व्यवहरत्त्रिंशद्वर्षाण्यथ जिनेन्द्रः।।१५।।
मुनि के दशविध धर्म सुश्रावक, की ग्यारह प्रतिमा उत्तम।
तीस वर्ष तक धर्म वृष्टि कर, जग में प्रभु विहरें शुभतम।।१५।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्मवन-दीर्घिकाकुल-विविध-द्रुमखण्ड-मण्डिते रम्ये।
पावानगरोद्याने, व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः।।१६।।
कमलों से परिव्याप्त सरोवर, विविध वृक्ष मंडित सुन्दर।
पावापुरि उद्यान वहां पर, कायोत्सर्ग स्थित जिनवर।।१६।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्तिककृष्ण-स्यान्ते, स्वातावृक्षे निहत्य कर्मरजः।
अवशेषं संप्रापद्-व्यजरामरमक्षयं सौख्यम् ।।१७।।

कार्तिक कृष्ण अमावस्या दिन, उषाकाल स्वाति नक्षत्र।
शेष कर्म हनि प्राप्त किया प्रभु, अजरामर सुख अक्षयवर।।१७।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

परिनिर्वृतं जिनेन्द्रं, ज्ञात्वा विबुधा ह्यथाशु चागम्य।
देवतरु - रक्तचन्दन - कालागुरु - सुरभिगोशीर्षैः।।१८।।

मुक्ति गये सन्मति को जाना, सभी देवगण झट आये।
देवदारु चन्दन कृष्णागरु, गोशीरष चन्दन लाये।।१८।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नीन्द्राज्जिनदेहं, मुकुटानल-सुरभि-धूपवरमाल्यैः।
अभ्यर्च्य गणधरानपि, गता दिवं खं च वनभवने।।१९।।

अग्निदेव मुकुटानल से शुभ, धूप माल से प्रभू शरीर।
संस्कारित कर गणधर को भज, स्वस्वस्थान गये सब सुर।।१९।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

इत्येवं भगवति वर्धमानचंद्रे, यः स्तोत्रं पठति सुसंध्ययोर्द्वयोर्हि।
सोऽनंतं परमसुखं नृदेवलोके, भुक्त्वांते शिवपद-मक्षयं प्रयाति।।२०।।

इस विधि जो भविजन श्रद्धा से, प्रातः संध्या उभय समय।
वर्धमान भगवन् की स्तुति, करते हैं धर भक्ति हृदय।।
वे नर सुर के अभ्युदयों का, दिव्यसुखों का अनुभव कर।
निश्चित ही अक्षय सुखमय शिव, पद पाते हैं भव्य प्रवर।।२०।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

यत्रार्हतां गणभृतां श्रुतपारगाणां, निर्वाणभूमि-रिह भारत-वर्षजानाम्।
तामद्य शुद्धमनसा क्रियया वचोभिः, संस्तोतु-मुद्यतमतिः परिणौमि भक्त्या।।२१।।

जहां जहां से अर्हन् भगवन्, गणधर मुनि श्रुत पारंगत।
भरतक्षेत्र से मुक्ति गये हैं, वे निर्वाणभूमि शुचिगत।।
उन भूमी की शुद्धमना मैं, वचन क्रिया को भी शुचिकर।
स्तुति करने का इच्छुक मन हो, भक्ती से प्रणमूं सुखकर।।२१।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कैलाशशैल-शिखरे परिनिर्वृतो-ऽसौ, शैलेशिभाव-मुपपद्य वृषो महात्मा।
चंपापुरे च वसुपूज्यसुतः सुधीमान् , सिद्धिं परामुपगतो गतरागबंधः।।२२।।
वृषभ महात्मा सहस अठारह, शील पूर्ण कर ईश हुए।
शुभ कैलाश शैल से शिवमय, परिनिर्वाण को प्राप्त हुए।
चंपापुर से ज्ञानशरीरी, वासुपूज्य प्रभु जगनामी।
रागबंध से रहित जिनोत्तम परणी सिद्धिवधू स्वामी।।२२।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

यत्प्रार्थ्यते शिवमयं विबुधेश्वराद्यैः, पाखंडिभिश्च परमार्थ-गवेषशीलैः।
नष्टाष्ट-कर्मसमये तदरिष्टनेमिः, संप्राप्तवान् क्षितिधरे बृहदूर्जयन्ते।।२३।।
जिस शिवमय पद की इन्द्रादिक, चाह करें प्रार्थना करें।
परमारथ अन्वेषणशाली, पाखंडी भी जिसे चहें।।
अष्ट कर्म के नष्ट समय में, अरिष्ट नेमी जिनवर ने।
प्राप्त किया वह लोकोत्तम पद, उत्तम ऊर्जयंत गिरि से।।२३।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

पावापुरस्य बहिरुन्नतभूमिदेशे, पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये।
श्रीवर्द्धमान-जिनदेव इति प्रतीतो, निर्वाणमाप भगवान्प्रविधूतपाप्मा।।२४।।
पावापुर के बाह्य सरोवर, पद्म कुमुदनी से शोभित।
मध्य भाग में उसके उन्नत, भूमि देश में प्रभु राजित।।

श्रीमन् वर्धमान जिनदेवा, त्रिभुवन विश्रुत पाप रहित।
कर्म अघाती धोकर के, निर्वाण गये भगवन् सन्मति।।२४।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शेषास्तु ते जिनवरा जितमोह-मल्लाः, ज्ञानार्कभूरिकिरणै-रवभास्य लोकान्।
स्थानं परं निरवधारित-सौख्यनिष्ठं, सम्मेद-पर्वततले समवापु-रीशाः।।२५।।
शेष बीस तीर्थंकर जिनवर, मोह मल्ल को जीत महान।
ज्ञान सूर्य किरणों से त्रिभुवन, भासित करके हुए प्रधान।।
श्री सम्मेद सुशैल शिखर से, अनवधि सौख्य सहित उत्तम।
परमधाम को प्राप्त हुए हैं, श्री जिनईश नमूं प्रतिदिन।।२५।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आद्यश्चतुर्दशदिनै-र्विनिवृत्तयोगः, षष्ठेन निष्ठितकृति-र्जिनवर्द्धमानः।
शेषा विधूतघनकर्म-निबद्धपाशाः, मासेन ते यतिवरास्त्वभवन्वियोगाः।।२६।।
वृषभदेव प्रभु चौदह दिन का, योग रोध कर सिद्ध हुए।
बेला से श्रीवीर प्रभू जिन, योग रहित हो मुक्ति गये।।
बद्धकर्म घन जाल अघाती, घात शेष बाइस जिनवर।
एक मास का योग निरोधा, शिवपद प्राप्त किया सुखकर।।२६।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

माल्यानि वाक्स्तुतिमयैः कुसुमैः सुदृब्धान्यादाय मानसकरै-रभितः किरंतः।
पर्येम आदृतियुता भगवन्निषद्याः, संप्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ताः।।२७।।
वर्ण संस्तुतिमय कुसुमों से, गूँथी माला को ले करके।
मानस कर से पुष्प बिखेरूं, चारों तरफ महामुद से।
भगवन् की निर्वाणभूमि की, त्रय प्रदक्षिणा दे करके।
प्रणमूं पुनि पंचमगति मांगूँ, भक्ति का फल श्रीजिन से।।२७।।
ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शत्रुंजये नगवरे दमितारि-पक्षाः, पंडोः सुताः परमनिर्वृतिमभ्युपेताः।
तुंग्यां तु संगरहितो बलभद्रनामा, नद्यास्तटे जितरिपुश्च सुवर्णभद्रः।।२८।।
कर्मशत्रुजित् पांडु पुत्र त्रय शत्रुंजय से मुक्ति गये।
संगरहित बलभद्र महामुनि तुंगीगिरि से मुक्ति गये।।
श्रीसुवर्णभद्र मुनि जितरिपु सरितातट से कर्म हने।
इन सबको औ सिद्धभूमि को नमूं भक्ति को धर मन में।।२८।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रोणीमति प्रबलकुण्डल-मेढ्रके च, वैभारपर्वततले वरसिद्धकूटे।
ऋष्यद्रिके च विपुलाद्रि-बलाहके च, विंध्ये च पौदनपुरे वृषदीपके च।।२९।।
द्रोणागिरि कुंडलपर्वत औ मुक्तागिरि वैभारगिरी।
सिद्धकूट ऋषिगिरि विपुलाचल तथा बलाहक विंध्यगिरी।।
पोदनपुर वृषदीपक सह्याचल सुप्रतिष्ठ हिमवानगिरी।
दंडात्मक गजपंथा औ पृथुसारयष्टि ये निर्वृतिगिरी।।२९।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सह्याचले च हिमवत्यपि सुप्रतिष्ठे, दंडात्मके गजपथे पृथुसार-यष्टौ।
ये साधवो हतमलाः सुगतिं प्रयाताः, स्थानानि तानि जगति प्रथितान्यभूवन् ।।३०।।
आर्यखंड में जहां-जहां से कर्मनाश मुनि सिद्ध हुए।
हैं अनेक निर्वाणक्षेत्र जो यहां ख्याति को प्राप्त हुए।।
उन सब पावन सिद्धक्षेत्र को नमन करूं श्रद्धा रुचि से।
सिद्ध हुए उन महासाधु को भी नित वंदूं बहुरुचि से।।३०।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

इक्षोर्विकार-रसपृक्त-गुणेन लोके, पिष्टोऽधिकं मधुरता-मुपयाति यद्वत्।
तद्वच्च पुण्यपुरुषै-रुषितानि नित्यं, स्थानानि तानि जगता-मिह पावनानि।।३१।।

इक्षुरस से मिश्रित आटा जैसे मधुर हुआ जग में।
वैसे पुण्य पुरुष से सेवित स्थल नित ही पूज्य बने।।
वे सब स्थल तीर्थ कहाते मन वच तन से नमूं उन्हें।
सभी पुण्य पुरुषों को प्रणमूं मम सब वांछित कार्य बने।।३१।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

इत्यर्हतां शमवतां च महामुनीनां, प्रोक्ता मयात्र परिनिर्वृति-भूमिदेशाः।
ते मे जिना जितभया मुनयश्च शांताः, दिश्यासु-राशु सुगतिं निरवद्य-सौख्याम् ।।३२।।

तीर्थंकर उपशांत महामुनि जहां जहां से मुक्ति गये।
उन निर्वाण क्षेत्र को वंदूं नितप्रति त्रिकरण शुद्धि लिये।।
वे जितभय जिन शांत महामुनि मुझको शीघ्र सुगति देवें।
दोषरहित सर्वोच्च सौख्यमय उत्तम पंचमगति देवें।।३२।।

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त श्रीमहावीरजिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंचलिका—**इच्छामि भंते! परिणिव्वाणभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। इमम्मि अवसप्पिणीए चउत्थसमयस्स पच्छिमे भाए आउट्ठ-मासहीणे वास-चउक्कम्मि सेसकालम्मि पावाए णयरीए कत्तियमासस्स किण्हचउद्दसिए रत्तीए सादीए णक्खत्ते पच्चूसे भयवदो महदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिं गदो। तिसुवि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोयिसिय-कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण, णिच्चकालं अच्चंति, पूजंति, वंदंति, णमंसंति, परिणिव्वाण-महाकल्लाणपुज्जं करेंति। अहमवि इह संतो तत्थ संताइं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।**

भगवन् परिनिर्वाण भक्ति का, कायोत्सर्ग किया उसके।
आलोचन करने की इच्छा, करना चाहूँ मैं रुचि से।।१।।

इस अवसर्पिणी का चतुर्थ शुभ, काल उसी के अंतिम में।
तीन वर्ष अरु साढ़े आठ, मास जब शेष बचा उसमें।।२।।

पावानगरी में कार्तिक शुभ, मास कृष्ण चौदश तिथि में।
रात्रि अंत स्वाती नक्षत्र शुभ, उषाकाल की बेला में।।३।।

वर्धमान महावीर महति, भगवान सिद्धि को प्राप्त हुए।
तीन लोक के भावन व्यंतर, ज्योतिष कल्पवासिगण ये।।४।।

निज परिवार सहित चउविध सुर, दिव्यगंध दिव पुष्पों से।
दिव्यधूप दिव चूर्ण वास से, दिव्यस्नपन विधी करते।।५।।

अर्चन पूजन वंदन करते, नमस्कार भी नित करते।
महावीर निर्वाण महाकल्याणक पूजा विधि करते।।६।।

मैं भी यहीं मोक्ष कल्याणक, की नित ही अर्चना करूं।
पूजन वंदन करूं भक्ति से, नमस्कार भी पुनः करूं।।७।।

दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय, हो मम बोधि लाभ होवे।
सुगतिगमन हो समाधिमरणं, मम जिनगुण संपति होवे।।८।।